**Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies,**
*Online ISSN 2278-8808, SJIF 2019 = 6.380, www.srjis.com*
*PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL, JAN-FEB, 2021, VOL- 8/63*

# प्राचीन एवं आधुनिक काव्यशास्त्रियों के काव्य–लक्षणों का समालोचनात्मक अध्ययन

**Birpal Singh, Ph. D.**
*Associate Professor and Head – Department Of Sanskrit*
*Government College Gonda Aligarh, U.P.-202123*

*Scholarly Research Journal's is licensed Based on a work at www.srjis.com*

काव्यशास्त्र के आदि, स्वप्न दृष्टा आचार्यों ने काव्य के स्वरूप लक्षण को व्यक्त करने हेतु गम्भीर चिन्तन किया है। प्राचीन आचार्यों ने सर्वप्रथम काव्य की आत्मा को खोजने की वृहद चेष्टा प्रारम्भ किए। बौद्धिक मंथन के परिणामस्वरूप भिन्न–भिन्न आचार्यों ने भिन्न–भिन्न विचार प्रकट किए। उनमें रस, अलंकार, रीति, वक्रोक्ति, ध्वनि और औचित्य को आत्मतत्त्व के रूप में स्वीकृत करके काव्य लक्षण के रूप में प्रस्तुत किया गया।

## (1) प्राचीन काव्यशास्त्रियों का काव्य लक्षण–

काव्यस्वरूप के प्रतिपादन में प्राक्काल से ही प्रायः दो विचारधारायें दृष्टिगत होती हैं। उनमें व्यास, दण्डी, जयदेव एवं पण्डितराज प्रभृति अनेक आचार्य 'शब्द' को काव्य मानते हैं तो भरत, भामह, वामन, रुद्रट, आनन्दवर्धन, राजशेखर, कुन्तक, भोज, महिमभट्ट, मम्मट, हेमचन्द्र, रुय्यक, वाग्भट विद्याधर इत्यादि आचार्य शब्द–अर्थ उभय की समष्टि को काव्य मानते हैं। आचार्य भरत गूढ़ शब्द एवं गूढ़ अर्थ से रहित तत्त्व को काव्य मानते है। इससे यह स्पष्ट है कि आचार्य भरत शब्दार्थ समष्टि को काव्य मानने के पक्ष में हैं। महर्षि व्यास के अनुसार अभीष्ट अर्थ को संक्षिप्त रूप में प्रकट कर देने वाले पद–समूह को काव्य कहते हैं।[1] दण्डी के काव्य–मन्तव्य पर व्यास का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। व्यास के मन्तव्य को दण्डी भी स्वीकार करते है[2], परन्तु यदि दण्डी के लाक्षणिक 'व्यवच्छिन्न' का तात्पर्य परिमाप्य–परिमापकत्व से हो तो काव्य में शब्द और अर्थ की समान स्थिति हो जाती है। सर्वप्रथम आचार्य भामह ने सुस्पष्ट रूप से शब्द और अर्थ के सहितभाव को काव्य कह कर अपना मन्तव्य व्यक्त किया है।[3] यद्यपि वे साहित्य अर्थात् सहित भाव की व्याख्या नहीं करते हैं। किन्तु अनेक दोषों एवं अलंकारों की विस्तृत चर्चा करते हैं जिससे ऐसा ज्ञात होता है कि वे शब्दार्थ को दोष रहित एवं अलंकार सहित मानते हैं। वामन की विचारधारा भिन्न है वे अलंकार को काव्य का अनित्य धर्म स्वीकार करते हुए रीति अथवा गुण को ही काव्य की आत्मा स्वीकार करते हैं।[4] वे काव्य लक्षण में सर्वप्रथम अदोष पद का सन्निवेश करते है। आचार्य आनन्दवर्धन ने गुण, रीति आदि को काव्य का शरीर बताते हुए ध्वनि को काव्यात्मा रूप मं प्रतिष्ठापित किया है तथा शब्दार्थ में काव्यत्व स्वीकार किया है[5] उक्त आचार्यों से पृथक् आचार्य राजशेखर वाक्य को काव्य मानते हैं। वाक्य से तात्पर्य पद–समूह

*Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies*

से ही है किन्तु उनके अनुसार पद का अर्थ शब्द नहीं अपितु शब्दार्थ–उभय से है वे शब्द और पद समूह (वाक्य) को व्याकरण एवं निरूक्तादि से परिभाषित करते हुए प्रस्तुत करते हैं[5] कविराज विश्वनाथ भी राजशेखर से प्रभावित है। आचार्य कुन्तक शब्द–अर्थ को काव्य स्वीकार करते हैं किन्तु वक्रोक्ति को काव्य का जीवित बताते हैं।[6] पूर्वोक्त आचार्यों की अपेक्षा भोजराज काव्य के वैशिष्ट्य को दोषरहितत्व, गुणयुक्तता, सालङ्कृति एवं सरसत्व आदि गुणों से युक्त स्वीकार करते हैं।[7] आचार्य मम्मट ने भामह से लेकर अपने समकालीन समस्त आचार्यों के काव्यलक्षणों का समन्वय करने का सटीक प्रयास किया है। उनके अनुसार दोषहीन, सगुण एवं सालंकार शब्दार्थ युगल का काव्य कहते हैं। मम्मट ने रस के अपकर्षक तत्त्वों को दोष कहा है।[8] ये ही मुख्य दोष–हीनता ही उन्हें काव्य में मान्य है। क्षुद्र दोष–कारण काव्य पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है। चूँकि आचार्य मम्मट ध्वनि मार्गी है अतः उनका आग्रह गुण और अलंकार में से, गुण पर ही अधिक होता है। उनकी यह मान्यता है कि काव्य में अनेक स्थल ऐसे होते हैं जिन्हें अलंकार का अभाव होता है तथापि काव्यत्व विद्यमान रहता है। अर्थात् काव्य का अस्तित्व अनिवार्यतः अलंकार पर नहीं आधारित है।

गहनदृष्टिपात से यह प्रकट होता है कि मम्मट से परवर्त्ती आचार्य हेमचन्द्र, विद्यानाथ एवं वाग्भट ने मम्मट के ही काव्य लक्षण को ही पूर्णतः स्वीकार कर लिया। अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ चन्द्रालोक में जयदेव ने काव्य लक्षण पर चिन्तन करते समय मम्मट के काव्यलक्षण को स्वीकार करते हुए काव्यलक्षण अक्षर सहित आदि लक्षण, वैदर्भी आदि रीति, श्रृंगार आदि रस, मधुरादि वृत्ति आदि सभी काव्यतत्त्वों को समाहित कर लिया है। अग्रतः काव्य–लक्षण पर विचार करते समय कविराज विश्वनाथ ने रस की सत्ता को स्वीकार करते हुए शब्दार्थ युग्म के स्थान पर 'वाक्य' में काव्यत्व स्वीकार किया है। वाक्य का अर्थ पदसमूह मानते हुए आचार्य विश्वनाथ भी शब्द को ही काव्य मानते दृष्टिगत होते हैं। वे काव्य को 'श्रव्य एवं दृश्य' दो रूपों में स्वीकार करते हैं। दृश्य काव्य तो अर्थ पर ही निर्भर होता है शब्द पर नहीं। यदि शब्द को ही काव्य माना जाए तो दृश्य काव्य को क्षति पहुँचेगी।[9] यद्यपि विश्वनाथ ने मम्मट के काव्य–लक्षण की आलोचना करते समय 'अदोषौ', 'सगुणौ' एवं 'अनलङ्कृती पुनः क्वापि' विशेषणों पर आपत्ति उपस्थित की है किन्तु 'शब्दार्थौ' पर आक्षेप नहीं किया। अन्ततः यह सिद्ध होता है कि आचार्य विश्वनाथ शब्दार्थ की समष्टि को ही काव्य मानते हैं। विश्वनाथ की काव्य परिभाषा पर आचार्य शौद्धोदनि का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगत होता है। शौद्धोदनि रसादि से युक्त वाक्य को काव्य कहते हैं। आदि शब्द से आचार्य को अल{ार ही अभीष्ट ज्ञात होता है। इस प्रकार रस एवं अलंकार समान रूप में लक्षित होते हैं। पण्डितराज जगन्नाथ ने सुस्पष्ट रूप से शब्द को ही काव्य माना है। उन्होंने प्राचीन आचार्यों के शब्दार्थ समष्टि में काव्यत्व का समावेश करते हुए रमणीय अर्थ की प्रतिपत्ति कराने वाले शब्द को काव्य कहा है। पण्डितराज के अनुसार रमणीय अर्थ वह है जिससे लोकोत्तर अह्लाद की अनुभूति

*Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies*

होती हो। लोकोत्तर का तात्पर्य है अह्लाद प्रदान करने वाला चमत्कारत्व, जिसका अनुभव सहृदय जन करते हैं।

**(2) आधुनिक काव्यशास्त्रकारों का काव्य–लक्षण**

आचार्य विश्वनाथ देव काव्य लक्षण में 'अदोषौ' इत्यादि पदों के सन्निवेश के प्रतिकूल विचार रखते हैं। उनके कथनानुसार दोषयुक्त काव्य में भी रस प्रतीति होती ही है। अतः 'अदोषौ' पद से तात्पर्य ''यथाशक्ति दोषराहित्य होने पर भी लक्षण में इसका निबन्धन नहीं होना चाहिए।[10]

आचार्य राजशेखर के विचार में कवियों द्वारा वर्णित अशास्त्रीय, अलौकिक और केवल परम्परा से प्रचलित अर्थ को कविसमय कहते हैं। अन्य आचार्यों ने भी कवि समय के सम्बन्ध में कविसमय के अन्तर्गत व्यंजना व्यापार का समावेश नहीं किया है। कविसमय तो कवियों में एक रूढ़शब्द है अतएव नरसिंह कवि द्वारा कविसमय में व्यंजना व्यापार का समावेश विचारणीय है। आचार्य राजशेखर द्वारा प्रस्तुत कविसमय के लक्षण

में अत्याप्तिदोष दृष्टिगत होता है। इस दोष से बचने के लिए नरसिंह कवि ने कविसमय के अन्तर्गत द्रव्य, गुण, क्रिया की कल्पना के अलावा व्यंजना व्यापार का भी समावेश किया है। इसके पश्चात् श्रीकृष्ण शर्मन का काव्य–लक्षण राजचूड़ामणि एवं नरसिंह कवि के काव्य–लक्षणों के समानान्तर दृष्टिगत होता है।

भट्टाचार्य प्रभृति अनेक नवीन अलंकारशास्त्री विलक्षण चमत्कार उत्पन्न करने वाले साहित्य को काव्य मानते हैं। आचार्य का 'विलक्षण चमत्कार' पद से क्या तात्पर्य है, यह स्पष्ट नहीं है। प्रथम तो इस परिभाषा में 'विलक्षण' विशेषण लगाना ही असंगत है। चमत्कार तो वैसे ही विलक्षण होता है फिर विशेषण की क्या उपादेयता रह जाती है? पुनः काव्य में विलक्षण आश्चर्यकारिता अथवा आस्वादयुक्तता रस से उत्पन्न होती है अथवा अल{ार से यह भी स्पष्ट नही है। काव्य में रस या अलंकार के कारण चमत्कार उत्पन्न होता है। यदि रस से चमत्कार उत्पन्न होता है तो उसे ध्वनि काव्य और अलंकार से चमत्कार आता है तो उसे चित्र काव्य कहते हैं।

भट्टाचार्य के विचार से यदि काव्य में विलक्षण चमत्कारकारित्व के साथ–साथ दोष की सत्ता है तो इससे काव्य की उपादेयता में कमी आ सकती है किन्तु काव्य के स्वरूप को हानि नही होती ऐसी दशा में उसे दोषयुक्त काव्य ही कहा जाएगा न कि अकाव्य। इस प्रकार भट्टाचार्य के मन्तव्य में चमत्कार ही काव्य का मुख्य लक्षण है उनका स्पष्ट मन्तव्य है काव्य में रसादि की सत्ता होने पर भी यदि चमत्कार का अभाव है

तो उसमें सहृदयजनों को काव्य–प्रतीत नहीं होती है।

आचार्य मम्मट ने भी काव्य–लक्षण के उदाहरण की वृत्ति में 'रसस्य च प्राधान्यान्नाल{ारता' कहा है। अतः यह सिद्ध होता है कि मम्मट के काव्यलक्षण में रस का भी समावेश है। इसी तरह 'अत्र स्फुटोन

कश्चिदलंकारः' कहने से किसी न किसी अल{ार की गूढ़ विद्यमानता लक्षित होती है। अतः अच्युत का मन्तव्य है कि काव्य लक्षण में रस, अलंकार इत्यादि पदों का भी सुस्पष्ट समावेश होना चाहिए।

यहाँ विचारणीय बिन्दु है कि गुण में अलंकार, रस इत्यादि का अन्तर्भाव कैसे सम्भव है? इस प्रश्न का समाधान यह हो सकता है कि रसिकों को आह्लादित करने वाले रूप माधुर्य के कारण गुणों में अलंकारइत्यादि का अन्तर्समावेश कर दिया जाता है। अच्युत राय के अनुसार मम्मट प्रभृति आचार्यों ने गुणों से पृथक् जो अल{ारों का उपपादन किया है, उसका कारण अलंकारों का बाहुल्य तथा गुणों की सूक्ष्मता है।[11]

आचार्य सोमेश्वर शर्मा एवं आचार्य **बदरीनाथ झा** सहृदयाहृदय को अह्लादित करने वाले शब्दार्थ युगल को काव्य कहते हैं। उक्त आचार्य युगल की परिभाषा पर आचार्य आनन्दवर्धन का स्पष्ट प्रभाव है। उन्हें भीकाव्य का यही लक्षण मान्य रहा है। सहृदयहृदयाह्लाद केवल एक विशेषणमात्र है। इससे सालंकारत्व आदि का समावेश हो जाता है क्योंकि तादृश शब्दार्थ से ही सहृदयों को आनन्दानुभूति होती है। यदि काव्य केस्फुटालंकार रहित एवं सदोष होने पर भी सहृदयों को आनन्दानुभूति होती हो तो ऐसे काव्य का काव्यत्व भी इसी लक्षण से स्वीकार हो जाता है। इस लक्षण से स्पष्ट है कि आचार्य का प्रमुख कथ्य सहृदयी जनों को आनन्द से परिपूर्ण करना है यदि यह कार्य काव्य में अदोष व अलंकार न होते हुए भी हो तो कोई नकारात्मक तथ्य न होगी क्योंकि ध्येय सिद्ध हो गया है।

बालकृष्ण भट्ट शास्त्री सालंकार, सगुण, निर्दोष, सरस और लोकातिशायी भाव से युक्त वाक्य को काव्य कहा है।[12]

आचार्य छज्जूराम शास्त्री 'विद्यासागर' शब्दमात्र में काव्यत्व का खण्डन करते हुए शब्दार्थ युगल में काव्यत्व स्वीकार करते हैं। उनका कथन है कि आस्वादव्य  जकत्व ही काव्यप्रयोजक (निर्माता) है और वह शब्दार्थ में समान रूप से रहता है। इसके अतिरिक्त शब्द मात्र में काव्यत्व मानने पर शब्दनिष्ठ दोषादि का ही निरूपण साहित्यशास्त्र में कर सकेंगे अर्थनिष्ठ दोषादि का नहीं, यह कठिनाई उपस्थित होगी। पुनश्च शब्दार्थ उभय में काव्यत्व न मानने से 'साहित्यशास्त्र' नाम की संगति भी न हो सकेगी। अतः आचार्य छज्जूराम शास्त्री जी रमणीयता सम्पन्न शब्दार्थ युगल को काव्य कहते है।[13] रमणीयता से तात्पर्य अलौकिक (लोकोत्तर) आनन्दजनकता है। यह रमणीयता उच्चारण प्रति उच्चारण द्वारा तथा अर्थज्ञान द्वारा सहृदयजनों को लोकोत्तर आनन्द प्रदान करती है। अलौकिकत्व का अर्थ आनन्दयुक्त चमत्कार ही है। इस प्रकार आचार्य छज्जूराम के अनुसार काव्य का परिष्कृत लक्षण चमत्कार विशिष्ट शब्दार्थ युगल ही होता है।[14]अन्य लक्षणों की भाँति यहाँ भी आचार्य ने काव्य मेंचमत्कारोत्पादक तत्त्व का उल्लेख नहीं किया है किन्तु दोष, गुण एवं अलंकारों का निरूपण अवश्य किया है। अतः कहा जा सकता है कि आचार्य छज्जूराम शास्त्री जी को निर्दोष, सगुण एवं साल{ार शब्दार्थ युगल का काव्यत्व ही

*Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies*

मान्य है। इसी प्रकार उपर्युक्त काव्य–लक्षण की तरह आचार्य हरिदास सिद्धान्त वागीश भी काव्यलक्षण में निर्दोषत्व, सगुणत्व इत्यादि पदों का समावेश
नहीं करते हैं। उनके अनुसार मनोहारी शब्दार्थ समूह को काव्य कहते हैं।[15]

यहाँ शब्द पद से क्रिया पद का भी आभास हो जाता है अतः काव्य का परिष्कृत लक्षण है 'मनोहारी शब्दार्थ घटित वाक्य' आचार्य हरिदास के अनुसार मनोहारित्व का तात्पर्य है– सहृदयों को अह्लादित करने वाला तत्त्व और वह है– रस माधुर्य, अलंकार सौन्दर्य एवं भाव वैचित्र्य इत्यादि।

आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी की परिभाषा दार्शनिक पृष्टिभूमि को रेखाकित करती है। उनकी मान्यता में काव्य स्थूल नहीं है अपितु भावात्म एवं ज्ञानात्मक है तथा उसका अर्थ उसका स्वरूप है। इस प्रकार काव्य ज्ञानरूप है और शब्द ज्ञान बाह्य है अर्थात् शब्द उसके अन्तर्गत नहीं आता है। उनका मानना है कि यदि शब्द में ज्ञानरूपता का अभाव होता है तो वह काव्यस्वरूप नहीं हो सकता। उनका यहाँ तक कहना है कि जिस प्रकार पेय रस के लिए कोई पात्र मात्र उपाधि के लिए होता है उसी प्रकार शब्द ज्ञान काव्य का उपाधि मात्र है। शब्द काव्य कला का बाह्य मात्र है। उसे काव्य कहना मात्र लाक्षणिक है। जैसे बिना शरीर के आत्मा नहीं रह सकती उसी प्रकार शब्द भी काव्य के लिए अतिआवश्यक है किन्तु वह काव्य नहीं हो सकता वे आचार्य रेवाप्रसाद मात्र अलङ्कृत अर्थ के ज्ञान को काव्य कहते हैं। इस प्रकार न वे शब्द को काव्य मानते हैं न अर्थ को और न शब्दार्थ उभय को ही। उनके अनुसार विज्ञान (विशिष्ट प्रत्यय) मात्र ही काव्य है। वेदान्त दर्शन में जीवात्मा के आनन्दांश को आनन्द कोष कहा गया है। उस आनन्द की प्रतीति के लिए अलौकिक विभावन अर्थात् अपूर्व सृष्टि रूपी कार्य में अनामृष्ट कारण से युक्त अलङ्कृत अर्थ का ज्ञान ही कविता अथवा काव्य है। यह काव्य 'सर्वमङ्गला' अर्थात् सम्पूर्ण लोक का कल्याण स्वरूप होता है आचार्य द्विवेदी द्वारा 'सर्वमङ्गला' शब्द का प्रयोग यह प्रदर्शित करता है कि उनका काव्य लक्षण समस्त भाषाओं के काव्यों की परिभाषा है जबकि अन्य आचार्यों की दृष्टिमात्र संस्कृत तकही सीमित रही है।

आचार्य द्विवेदी ने काव्यलक्षण में 'अलङ्कृत' पद का सन्निवेश किया है इससे वेद एवं पुराणादि में अतिव्याप्ति नहीं होती है। संवृत्ति शब्द का प्रयोग पुनरुक्ति है। अर्थ तो ज्ञान रूप ही होता है किन्तु भाव की स्पष्टता के लिए अर्थसंवित्ति कहना उचित है। इस अर्थ की उपाधि है 'अलंकार'। यहाँ आचार्य द्विवेदी का यह लक्ष्य है कि अलंभाव (पूर्णता) लाने वाले काव्य के समस्त तत्त्वों–गुण, रस, अलंकार आदि अलंकार ही हैं। कवि कर्म की दृष्टि से काव्य की एक अलग ही परिभाषा बताया है। उनका कथन है कि कवि की प्रतिभा से उत्पन्न सृष्टि को काव्य कहते हैं यह ज्ञान स्वरूप होती है। आचार्य द्विवेदी अनेक प्रकार से काव्य को परिभाषित करते हैं एक अन्य स्थल पर वे कहते हैं कि जहाँ शब्द और अर्थ के द्वारा किसी भिन्न चमत्कार युक्त अर्थ का बोध होता है उसे काव्य कहते है। आचार्य द्विवेदी जी काव्य धर्म के प्रसप्र में कहते है कि पूर्णता से युक्त एवं विच्छिति से सम्पन्न ज्ञान विशेष ही काव्य है।

*Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies*

द्विवेदी जी ने पूर्णता से तात्पर्य दोषाभाव एवं समस्त अवयवों की अनवद्यता से किया है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी के काव्य लक्षण में दोषाभावत्व, गुणत्व एवं अल{ारित्व का पूर्ण समावेश हो जाता है जो प्राचीन आलंकारिक आचार्यों के लक्षणों के समरूप प्रतीत होता है।

इस प्रकार काव्य के लोकोत्तर आख्यान बनने में सगुणत्व, अदोषत्व सालंकारत्वादि समस्त धर्मों का सद्भाव अपेक्षित है। आचार्य मम्मट के उपरियुक्त सिद्धान्त का अभिराजयशोभूषणकार ने अपने काव्यलक्षण में किया है।

**आधुनिक एवं प्राचीन काव्यशास्त्रियों के काव्य लक्षणों की समालोचनात्मक विवेचना–**

काव्य के लक्षण या स्वरूप के प्रतिपादन में प्राचीन काव्यशास्त्री प्रायः दो विचारधाराओं में विभाजित दृष्टिगत होते हैं। प्रारम्भ में व्यास, दण्डी, जयदेव से लेकर पण्डितराज प्रभृति आचार्य 'शब्द' को काव्य मानते हैं तो भरत, भामह, वामन, रुद्रट, आनन्दवर्धन, राजशेखर, कुन्तक, भोज, महिमभट्ट, मम्मट, हेमचन्द्र, रुय्यक, वाग्भट्ट, विद्याधर आदि आचार्य शब्द–अर्थ उभय की समष्टि को काव्य का स्वरूप मानते है।। उक्त दोनों विचारधाराओं की विवेचना करने से यह तथ्य प्रकट होता है कि प्राचीन आचार्यों ने काव्य–लक्षण के परिपेक्ष्य में शब्दार्थ समष्टि को ही अधिकतम महत्त्व प्रदान किया है। जब आचार्य भामह ने किि चत भिन्नता के साथ ''तददोषौशब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि'' अर्थात् शब्द और अर्थ की वही समष्टि काव्य होती है जो दोषरहित हो, गुणों से युक्त हो तथा यथासम्भव अलंकारों से भी संवलित हो। मम्मट के परवर्त्ती आचार्यों ने अधिकांश प्रकारान्तर से उन्हीं के विचारों का समर्थन किए हैं। साहित्य दर्पणकार विश्वनाथ तथा रसगप्राधर के प्रणेता पण्डितराज जगन्नाथ अवश्य ही कुछ पृथक् विचार रखे है। **'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्'** (साहित्यदर्पण) तथा **'रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्'** (रसगप्राधर) साहित्यदर्पणकार विश्वनाथ ने रसात्मक वाक्य को काव्य बताकर शब्द–अर्थ समष्टि का ही महत्त्व स्वीकारा है।

इस प्रकार यदि काव्य लक्षणों की तुलनात्मक विवेचना किया जाय तो आचार्यों द्वारा व्यक्त काव्य–लाक्षणिक विचारों में एक विलक्षण साम्यता दृष्टिगत होती है, जो शब्दार्थ समष्टि पर ही जाकर ठहरती है। रही बात

केवल शब्द की तो पण्डितराज ने जिस 'शब्दः काव्यम् शब्द की प्रमुखता प्रतिपादित करते हैं उसमें उन्हें भी 'रमणीयार्थ प्रतिपादक' विशेषण शब्द के साथ जोड़ना पड़ा है। वह 'रमणीयार्थ' शब्द अर्थ समष्टि को सिद्ध करता है।

जहाँ तक आधुनिक काव्यशास्त्रियों के काव्य लक्षण सम्बन्धी विचारों की समीक्षा का प्रश्न है तो उसमें नवयुगीन कुछ आचार्यों ने काव्य–लक्षण पर विचार किया है उसमें 'काव्याल{ारिकारिका' के लेखक प्रो0 रेवाप्रसाद द्विवेदी, 'काव्यसत्यालोक' के रचयिता डॉ0 ब्रह्मानन्द शर्मा, 'साहित्यसन्दर्भः' के लेखक आचार्य शिवाजी उपाध्याय, 'अभिनवकाव्याल{ार' के कर्त्ता प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी, 'नवकाव्यतत्त्वमीमांसा' के

*Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies*

लेखक रहसबिहारी द्विवेदी एवं अतिशय ख्याति प्राप्त काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ 'अभिराजयशोभूषणम्' के प्रणेता डॉ0 राजेन्द्र मिश्र के विचारों की तुलनात्मक समीक्षा करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

डॉ0 रेवाप्रसाद द्विवेदी एवं राधावल्लभ त्रिपाठी मूलतः अलंकारवादी विचारक हैं। दोनों अलंकार को ही काव्यात्मा मानते हैं। दोनों ही आचार्य प्रायः वामन एवं दण्डी के काव्यदृष्टि का समर्थन करते प्रतीत होते हैं। डॉ0 ब्रह्मानन्द शर्मा का काव्य–लक्षण प्रायः पूर्वाचार्यों के लक्षण से पृथक दृष्टिगत होता है। उनका कहना है कि 'काव्य में, सत्य अर्थ में रहता है और अर्थ में शब्द रहता हैं। अतएव काव्यस्वरूप में शब्दार्थ उभय का

समावेश होना चाहिए। डॉ0 शर्मा काव्य में एक नया तत्त्व जोड़ते हैं वह है सत्य। उनका कथन है कि काव्य सत्य का व्यापक सिद्धान्त है जिसमें शब्द, अर्थ, अल{ार, व्य जना, रस, गुण आदि समस्त तत्त्वों का अन्तर्भाव हो जाता है। वे शब्दार्थ में सत्य के रमणीय प्रतिपादन को काव्य कहते हैं। डॉ0 शर्मा आचार्य द्विवेदी के मत का खण्डन भी करते हैं। डा0 रहस बिहारी द्विवेदी द्वारा व्यक्त काव्य लक्षण भी काव्य की प्रशंसामात्र दृष्टिगत होता है। आचार्य शिवजी उपाध्याय काव्य–लक्षण बताते हुए कहते है कि 'सुन्दर तत्त्व सौन्दर्य' ही काव्य होता है। नाना प्रकार के बिम्बों एवं दृष्टान्तों से वे सौन्दर्य को परिभाषित करते हैं। मात्र सौन्दर्य ही काव्य नहीं होता है। यद्यपि काव्य जन्य सौन्दर्य का समर्थन प्रायः आचार्यगण सदैव करते हैं। वस्तुतः उपाध्याय जी का काव्य लक्षण भी मात्र काव्य प्रशस्ति ही सिद्ध होता है। इसी क्रम में 'अभिराजयशोभूषणम्' के प्रणेता डॉ0 राजेन्द्र मिश्र द्वारा जो काव्य–लक्षण प्रस्तुत किया गया है वह प्राचीन एवं आधुनिक विचारों के उत्कृष्ट समायोजन के साथ कि ंचत और भी सारगर्भित रूप में व्यक्त हुआ है। उनका काव्य लक्षण के सम्बन्ध में कथन है कि 'लोकोत्तर रसगर्भ एवं स्वभावज आख्यान को काव्य कहते हैं।

उक्त नवीन काव्य लक्षण की समीक्षा में यह कहा जा सकता है कि शब्दार्थ की समष्टि जो लोकोत्तर आख्यान के साथ रसात्मक हो स्वभावज हो, वह ही काव्य का लक्षण कहा जा सकता है। इसके साथ डॉ0 मिश्र ने पूर्वाचार्यों के मत का सम्यक् समन्वय भी किया है जिसमें सगुणत्व (माधुर्योदिगुण) अदोषत्व च्युत संस्कारादि दोषों से रहित होना आदि काव्य–लक्षण हो सकते है। इस प्रकार यह माना जा सकता है कि आधुनिक काव्यशास्त्रियों के काव्यलक्षण में डॉ0 राजेन्द्र मिश्र द्वारा वर्णित लक्षण सर्वोत्कृष्ट एवं विद्वद्जन ग्राह्य है इसमें सन्देह नही है।

**संदर्भः**

*संक्षेपाद् वाक्यमिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली।। (अग्निपुराण 337/6)*

*शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली।। (काव्यादर्श, पृ0 9)*

*शब्दार्थौसहितौ काव्यं, गद्यं पद्यं च तद् द्विधा। (काव्याल{ार 1.16)*

*रीतिरात्मा काव्यस्य, (काव्याल{ार सूत्राणि, पृ0 14)*

*काव्यास्यात्मा ध्वनिरिति। शब्दार्थशरीरं तावत् काव्यम् (ध्वन्यालोक, पृ0 39)*

*Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies*

*व्याकरणस्मृतिनिर्णीतः शब्दो, निरुक्तनिघण्दवादिभिर्निर्दिष्टस्तदभिधेयोऽर्थस्तौ पदम्। पदानामभिभित्सितार्थग्रन्थनाकरः सन्दर्भो वाक्यम्। तदेव वाक्यं स्फुटाल{रिगुणविशिष्टं दोषवर्जितं काव्यं। गुणवदलङ्कृतं च वाक्यमेव काव्यम्। (काव्यमीमांसा, पृ0 54, 56, 62)*

*शब्दार्थौसहितौवक्र कविव्यापार शालिनि।*

*बन्धेव्यवस्थितौ काव्यं तद्विदाह्लादकारिणि। (वक्रोतिजीवित, पृ0 17)*

*निर्दोषं गुणवत्काव्यमलंकारैरलङ्कृतम्। रसान्वितं कविः कुर्वन् कीर्तिं प्रीतिं च विन्दति।। (सरस्वती कण्ठाभरण, पृ0 3)*

*तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि।*

*(काव्यप्रकाश, पृ0 19)1 निर्दोषा लक्षणवती सरीतिर्गुणभूषणा। सालंकारसानेकवृत्तिवाक् काव्यनामभाक्।। (चन्द्रालोक, पृ0 6)*

*वाक्यं रसात्मकं काव्यम्। (साहित्यदर्पण, पृ0 23)*

*1 अतिनवीनास्तु—विलक्षणचमत्कारकारित्वमेव काव्यत्वमामनन्ति। (काव्यविलास, पृ0 2)*

*2 विलक्षणचमत्कारकारिणि दोषसत्वे दुष्टं काव्यमिति प्रयोगः। न तु नैतत्काव्यमिति।*

*(काव्यविलास, पृ0 2)*

*Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies*